अनपढ़ों जैसी पढ़े-लिखों की जमात

पिछले महीने देश में शिक्षा गुणवत्ता को लेकर दो रिपोर्टें पेश की गईं। इनमें एक सरकारी तो दूसरी गैर-सरकारी है। यह दोनों तफ्सील से बताती हैं कि वास्तव में हमारी शिक्षा प्रणाली ने आखिर देश को दिया क्या है। जहां आधिकारिक रिपोर्ट में ज्यादा ध्यान स्कूलों में बच्चों ने कौन-कौन से विषय पढ़े हैं, इस पर केंद्रित है वहीं दूसरी वाली यह आईना दिखाती है कि जिस किस्म की शिक्षा छात्र ले रहे हैं, इससे उनका संवरेगा क्या? अपने युवाओं के भविष्य को लेकर संजीदा कोई और अन्य मुल्क होता तो वहां इन दोनों रपटों पर समाचार पत्रों में पन्ने पर पन्ने और चैनलों पर घंटों बहस का आलम बन जाता लेकिन हमारे भारत में ऐसा नहीं हुआ। हमारे लोगों के पास उस फिल्म पर खासी माथापच्ची करने का तो समय है जो अभी रिलीज भी नहीं हुई और वह भी उस पात्र को लेकर जो कभी इतिहास में हुआ ही नहीं...लेकिन आने वाली पीढ़ी का भविष्य कैसा होना चाहिए, इसकी चिंता करने हेतु वक्त जरा भी नहीं है।

योगेंद्र यादव

शिक्षा की वार्षिक स्थिति (एनुएल स्टेट ऑफ एजुकेशन) नामक यह गैर आधिकारिक रिपोर्ट गैर-सरकारी संगठन 'प्रथम' ने पेश की है। एक दशक से ज्यादा हो गया जब से देश के ग्रामीण अंचल में शिक्षा की हालत पर 'प्रथम' द्वारा दी गई रिपोर्टें लोगों का ध्यान खींचती आई हैं। इस बार के संस्करण को खासतौर पर 'बेसिक अक्षर ज्ञान से परे देखना' नाम दिया गया और इसमें 14 से 18 साल के बीच उम्र वाले विद्यार्थियों का शिक्षा-उपलब्धि स्तर कितना है, इस पर ध्यान केंद्रित किया गया था। आंकड़ों के लिए 24 राज्यों में एक जिले को चुना गया और कुल 23000 परिवारों तक पहुंच कर उनके किशोरों से प्रश्नावली भरी गई। सुघढ़ता और प्रभावशाली ढंग से किए गए इस सर्वे ने वैसे तो कुछ ध्यान जरूर खींचा है लेकिन अधिकांशतः यह मुख्य विषय यानी शिक्षा की गुणवत्ता से परे ही रहा।

उधर आधिकारिक सर्वे एनसीईआरटी के तत्वावधान में देश की बहु-प्रतिष्ठित संस्था नेशनल एचीवमेंट सर्वे द्वारा किया गया है। इसका दायरा बिना शक बहुत विशाल है और इसमें देश के सभी 701 जिलों में 1 लाख 10 हजार स्कूलों और लगभग 22 लाख विद्यार्थियों को शामिल किया गया है। इस सरकारी सर्वे की विशेषता है कि यह हमें जिला स्तरीय भरोसेमंद जानकारी देता है। उम्मीद के मुताबिक यह रिपोर्ट ठेठ सरकारी शुष्क शैली की है, जिसमें शिक्षा का वह पहलू है, जिस पर ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए था। वह बड़ी मुश्किल से पल्ले पड़ने वाली तालिकाओं और चित्रांकन के ढेर तले दब गया है। कुछ अबूझ कारणों से एनसीईआरटी ने इससे पहले पेश की जाने वाली राष्ट्रस्तरीय रपट को प्रस्तुत न करने का निर्णय लिया है, लिहाजा अब जो कुछ हमारे सामने है, वह जिला स्तर की किंतु अव्यवस्थित और विशालकाय रिपोर्ट है, जिसमें प्रत्येक जिले को लेकर बनाई गई कम-से-कम 12 रपटें हैं, जिसके चलते इन सबको पढ़ना बहुत मुश्किल काम है।

इसकी बनिस्पत एईसी की रिपोर्ट बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 10वां हिस्सा 14 से 18 साल के किशोरों का है। यह वर्ग वह है, जिनके अभिभावक कुछ न कुछ कमाई कर रहे हैं। अतएव यह आंकड़े बताते हैं कि कुछ ही सालों में वयस्क होकर देश के उत्पादन में भावी योगदान करने हेतु हमारे आज के इन ग्रामीण किशोरों की तैयारी किस स्तर तक हो पाई है। फिलवक्त देश के युवाओं के सामने दो तरह की समस्याएं मुंह बाए खड़ी हैं। पहली यह कि नौकरियां बहुत सीमित मात्रा में निर्मित हो रही हैं और दूसरी कि भले ही स्कूल के बाद ऊंची शिक्षा प्राप्त करने वालों की संख्या तेजी से बढ़ती जा रही है, भारत उन्हें भविष्य का सामना यथेष्ट ढंग से करवाने हेतु तैयार करने के काम में अभी भी पूरी तरह लैस नहीं है।

इस रिपोर्ट की खोज उस बात को भी सिद्ध करती है, जिसका पता हमें काफी वक्त से है यानी विद्यालय में दाखिला लेने वालों की संख्या हमारे लिए अब चिंता का विषय नहीं है। केवल 14 प्रतिशत किशोर ही ऐसे हैं, जिन्होंने कभी किसी स्कूल का मुंह नहीं देखा। अतएव मुख्य चुनौती अब शिक्षा की गुणवत्ता है। यही रिपोर्ट हमें इस शोचनीय स्थिति से भी अवगत करवाती है कि 14-18 आयु वर्ग के किशोरों के लगभग चौथाई हिस्से को किताब का आसान-सा पाठ भी ढंग से पढ़ना नहीं आता, वह भी अपनी मातृभाषा में! जबकि यह समर्था तभी बन जानी चाहिए थी जब वे 8 साल के हुए थे। सर्वे में शामिल किए किशोरों की कुल संख्या का 57 फीसदी हिस्सा वह है जो गणित की सबसे बुनियादी गणना तक नहीं जानता। उदाहरण के लिए 591 को 4 से भाग देने पर क्या फल आएगा, इनमें से अधिकांश ने भले ही स्कूल में थोड़ा-बहुत अंग्रेजी ज्ञान लिया है लेकिन विद्यालय से बाहर इनमें लगभग आधे ऐसे निकले जो इंग्लिश में आसान-सा वाक्य जैसे कि 'व्हाट इज़ टाइम' भी नहीं बोल पाए। जरा अंदाजा लगाइए इस तरह की जैसी भी औपचारिक स्कूली शिक्षा उन्होंने ग्रहण की है, उसके बूते पर हमारा यह किशोर वर्ग जिंदगी में क्या कर पाएगा। लगभग एक-चौथाई को ठीक से पैसे गिनना तक नहीं आता, 40 प्रतिशत घड़ी देखकर समय नहीं बता पाए, 60 फीसदी को गणित का सबसे मूल यानी गुणा-भाग-लंबाई-चौड़ाई के प्रश्न तक हल करने नहीं आते। वहीं स्कूल से बाहर इन किशोरों की जिंदगी में शिक्षा का व्यावहारिक योगदान क्या है, तो सर्वे बताता है कि इनमें से 45 प्रतिशत किसी वस्तु के पैकेट पर लिखे आम निर्देशों को सही ढंग से पढ़कर समझ नहीं पाए, 36 फीसदी वह हैं, जिन्हें खरीददारी के जरूरी जमा-घटा-गुणा-भाग तक नहीं आते और इनका 58 प्रतिशत देश के नक्शे में अपने राज्य की पहचान नहीं करवा पाया।

भारी-भरकम सरकारी रिपोर्ट को अव्वल तो पढ़ने में फिर पूरी तरह बूझने में काफी वक्त लगेगा, लेकिन आरंभिक दृश्य यहां भी फिक्रमंद करने वाले हैं। हां, इनसे मिले आंकड़े हमें विद्यार्थियों के विभिन्न वर्गों के बीच एक जैसे कुछ बिंदुओं के आधार पर तुलना करने का अवसर प्रदान करते हैं। एकमात्र जो अच्छी खबर यह है कि स्कूल में दाखिला लेने वाले लड़के और लड़कियों की संख्या के बीच जो बड़ा अंतर हुआ करता था, वह अब काफी कम रह गया है।

तथापि ग्रामीण और शहरी स्कूलों, समाज के वंचित वर्गों व संपन्न जातियों, सरकारी और निजी स्कूलों के बीच का अंतर असहज रूप से बहुत ज्यादा है। यह लगातार चौथा साल है जब राष्ट्रीय शिक्षा उपलब्धि सर्वे बता रहा है कि गुणवत्ता के मामले में शिक्षा नीचे की ओर जा रही है।

दरअसल दोनों सर्वे ऐसा कुछ नहीं बता रहे जो नया हो। जो कोई भी सरकारी स्कूलों वह भी ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्र वालों पर नजर रखता आया है, उसे इन रिपोर्टों से कोई नया झटका नहीं लगने वाला। किंतु जहां ये सर्वे हमें आईना दिखाते हैं कि आज हमारी स्कूली शिक्षा में क्या-क्या कमियां हैं वहीं जिला स्तर पर इसके कारणों और निदान को समझने हेतु उपाय क्या होने चाहिए, यह भी मुहैया करवा रहे हैं। असल सवाल तो यह है कि क्या कोई देख-सुन भी रहा है? केंद्रीय बजट में की गई बड़ी-बड़ी घोषणाओं और इनके लिए रखे गए बहुत कम धन के हिसाब से देखें तो उत्तर बहुत आशान्वित करने वाला नहीं है।

लेखक राजनीतिक एवं सामाजिक कार्यकर्ता हैं।